महर्षि दयानन्द सरस्वती - श्री अरविन्द की दृष्टि में •

• श्री अरविन्द की अंग्रेजी पुस्तक "बंकिम-तिलक-दयानन्द" में वर्णित महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व, चिंतन और वेद विषयक योगदान का अनूठा मूल्यांकन •

-- डॉ. श्याम बहादुर वर्मा

श्री अरविन्द ने स्वामी दयानन्द पर दो लेख गुरुकुल कांगड़ी से प्रकाशित अंग्रेजी मासिक पत्र 'वैदिक मैगज़ीन' के लिए लिखे थे। इन निबन्धों में स्वामी दयानन्द के प्रति श्री अरविन्द ने अत्यन्त आदरणीय भाव प्रकट किए हैं। उन्होंने स्वामी दयानन्द को भारत के पुनरुद्धारकों में अनुपम तथा निराले ढंग का कार्य-शील महापुरुष कहा है। महादेव गोविन्द रानडे सदृश अन्य महापुरुषों ने राष्ट्र के उत्कर्ष में अमूल्य योग दिया है और उनका प्रभाव भारत की आत्मा में है भी, "परन्तु किसी ठीक-ठीक आकार को लेकर यह नहीं कहा जा सकता कि यह है जो इस मनुष्य को अभिप्रेत था, यह कह सकना तो दूर रहा कि यह आकार है जो उस आत्मा का ही ठीक मूर्त रूप है।" किन्तु स्वामी दयानन्द की कार्य-शैली इनकी अपेक्षा भिन्न थी। उन्होंने "वस्तुओं और मनुष्यों पर अपनी आकृति की अमिट तौर पर छाप लगा दी थी मानो पीतल पर मुद्रा अंकित कर दी गई हो।" 'आध्यात्मिक व्यवहार्यता' से सम्पन्न दयानन्द "वह मनुष्य था जो निश्चित ही और स्पष्ट-स्पष्ट उस कार्य को जानता था जिसे करने के लिए वह भेजा गया था, जिस ने आत्मा की अधिकारपूर्ण दिव्य दृष्टि से देखकर अपनी साधन सामग्री का चुनाव किया था तथा अपनी स्थिति को निर्धारित किया था। और फिर अपने परिकल्पित विचार को एक जन्मसिद्ध कार्यकर्ता की शक्तिपूर्ण सिद्धहस्तता के साथ कार्यरूप में परिणत किया था।"

परमेश्वर का संदेश देने के लिए निर्भय होकर बाधाओं से टकराता है और विजय पर विजय प्राप्त करता है - "जब मैं परमेश्वर के कारखाने के इस दुर्दम कारीगर की मूर्ति का ध्यान करता हूं तो मेरे सामने झुंड के झुंड चित्र आने लगते हैं जो सभी चित्र संघर्ष के, कार्य के, विजय के, विजयी परिश्रम के चित्र हैं। तब में स्वयं से कहता हूं कि यह है दिव्य प्रकाश का सैनिक, परमेश्वर के जगत का योद्धा, मनुष्यों और संस्थाओं का बनाने वाला शिल्पकार और आत्मा के सम्मुख प्रकृति जो कठिनाइयां उपस्थित करती है, उनका निर्भीक और अदम्य विजेता।"

स्वामी दयानन्द ने एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने "राष्ट्रीय चरित्र में प्राचीन आर्य तत्त्व की फिर से स्थापना की थी।" स्वामी दयानन्द ने "जो कुछ भी बाहर से ग्रहण किया, उसे आत्मसात कर राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुरूप उपयुक्त रूपों में प्रकट किया। यह जो आत्मनिर्धारण का गुण है, अवसरवादिता से ठीक भिन्न, वही उनके लड़ाकापन और आक्रामकपन का मूल कारण था।" श्री अरविन्द के अनुसार स्वामी दयानन्द ने भारतीयों को पुकार-पुकार कर यही कहा था - "हे भारतीयो ! केवल असीम भाव में रहने तथा अनिश्चित भाव से बढ़ने से संतुष्ट मत हो। अपितु यह देखो कि परमेश्वर तुम्हें क्या बनाना चाहते हैं। उनकी प्रेरणा के प्रकाश में निर्धारित करो कि तुम्हें आगे क्या बनना है। उसे देखते हुए उसके अनुसार स्वयं को गढ़ो। जीवन में से गढ़कर उसे तैयार करो। विचारक बनो, परन्तु साथ ही करने वाले भी बनो।"

श्री अरविन्द पर स्वामी दयानन्द की 'आध्यात्मिक व्यवहार्यता' ने गहरी छाप छोड़ी थी। "दयानन्द के जीवन में हमेशा इस आध्यात्मिक व्यवहार्यता का शक्तिशाली प्रवाह दिखाई देता है। सर्वत्र उनके नाम पर एक स्वतःस्फूर्त शक्ति और निश्चयात्मकता की छाप है।"

श्री अरविन्द ने स्वामी दयानन्द की व्यावहारिक अन्तर्दृष्टि की प्रशंसा की है जिससे "उन्होंने वेद की इस वास्तविक श्रेष्ठता को पहचाना कि यह वह धर्म-पुस्तक है जिसमें इस देश और राष्ट्र के निर्माता पूर्वजों की गहरी और प्रबल भावना छिपी हुई है। वह धर्म-पुस्तक जो दिव्यज्ञान दिव्यपूजा और दिव्यकर्म की चर्चा से ओत-प्रोत है।" राजा राममोहनराय की दृष्टि उपनिषदों पर ही रुक गयी थी पर स्वामी दयानन्द मूलभूत बीज रूप वेद तक पहुंचे। "उनके अन्दर राष्ट्रीय सहजज्ञान की शक्ति थी" और इसे उन्होंने राष्ट्रीय अन्तर्दृष्टि की शक्ति में रूपान्तरित कर लिया था और "इसलिए उन रचनाओं को जो उसमें निकली हैं, चाहे वे प्रचलित परम्पराओं के कितनी ही विरुद्ध हों, अवश्य ही गहरे रूप में राष्ट्रीय होना चाहिए।" इस प्रकार स्वामी दयानन्द की राष्ट्रीयता के इस मूल आधार का उद्घाटन श्री अरविन्द ने ही किया था। राष्ट्रीय होने का अभिप्राय है अतीत की भावना से वर्तमान में जीवन संचारित करना और स्वामी दयानंद ने वेदों को इसी रूप में ग्रहण किया था - "और देखो, जैसे जीवन में वैसे ही अपने कार्य में उसने इस अतीत को ग्रहण किया है, जो निर्मल शक्ति के प्रथम प्रवाह के रूप में है, अपने आदि-स्रोतों से सीधा आने के कारण पवित्र है, अपने मूलभूत नियम और इस कारण किसी शाश्वत और सदा नवीन किए जा सकने योग्य तत्त्व के समीप है।"

स्वामी दयानंद में आर्यत्व था अर्थात "एक आन्तर निष्कपटता और दृढ़ सत्यहृदयता, स्पष्टता और वाणी तथा कार्य में स्फुट उदात्तता।" स्वामी दयानंद ने इस कठिन सत्य-व्रत का पालन किया क्योंकि वे वैदिक शिक्षा को जीवन में उतार चुके थे और "यही उनके सच्चे ईश्वर-पुत्र होने का प्रमाण है। यही वह छाप थी जिसे दयानन्द अपने पीछे छोड़ गए और यही उनका अपना चिह्न और प्रतिमा होनी चाहिए जिसके द्वारा कोई कार्य 'उनके द्वारा प्रवर्तित है' इस रूप में पहचाना जा सके।"

आचार्य सायण के अनुगामियों अथवा यूरोपीय विचारकों में से कुछ का कथन है कि स्वामी दयानन्द ने वेद का अर्थ कल्पना से और मनमानेपन से किया है। श्री अरविन्द ने इस आरोप का बड़ी कुशलता से खण्डन किया है। वे आचार्य सायण कृत वेद-भाष्य को मनमानी कल्पना के दोष से युक्त दिखाते हैं और यूरोपियों की सारी वेद-व्याख्याओं को अपने पूर्वाग्रहयुक्त विचारों के प्रतिपादनार्थ कपोल कल्पित मात्र बताते हैं, भले ही उनमें पांडित्य और परिश्रम हो। श्री अरविन्द के अनुसार स्वामी दयानन्द ने जो वेद-भाष्य किया है, वह सफल है क्योंकि उसमें वेद प्रतिपादित धर्म का केन्द्रीय विचार सुरक्षित है और वेद की अन्तःसाक्षी उसे पुष्ट करती है। और "यहां दयानन्द का दृष्टिकोण स्पष्ट है, उसका आधार सुदृढ़ है, अखण्डनीय है।"

स्वामी दयानन्द का यह आधारभूत विचार कि "वेद की ऋचाओं में एक ही परम देवता के गीत गाए गए हैं - अनेक नामों के द्वारा जो इसी अभिप्राय व उद्देश्य से विचारपूर्वक प्रयुक्त हुए हैं कि उस एक देवता के भिन्न-भिन्न गुणों तथा शक्तियों का वर्णन करें" स्वयं वेद के 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' मंत्र से ही सिद्ध है। और जब स्वामी दयानन्द की यह बात प्रमाणित हो जाती है "तब तत्काल वेद का सारा ही स्वरूप उस अर्थ में निश्चित हो जाता है जो अर्थ दयानन्द ने वेद को दिया है। केवल कर्मकाण्डपरक, गाथावादी और बहुदेवतात्मक सायण की व्याख्या ढह जाती है, केवल अन्तरिक्ष-विद्यापरक और प्रकृतिवादी यूरोपीय व्याख्या भी ढह जाती है। उसके स्थान पर हमें वास्तविक ईश्वरीय शास्त्र मिल जाता है..."

और फिर स्वामी दयानन्द के वेद-विषयक अन्य विचार तो "इसी आधारभूत विचार का तर्कसम्मत परिणाम हैं।" स्वामी दयानन्द ने वेद में नैतिक व आधार सम्बन्धी तत्त्वों का, सृष्टि-रचना के रहस्य का तथा विश्वव्यापी प्राकृतिक नियम का उद्घाटन किया है। पर स्वामी दयानन्द ने आधुनिक विज्ञान के सत्यों को

वैदिक मन्त्रों में पहले से प्राप्य दर्शाया है। इस पर जो संदेह किया जाता है उस विषय पर श्री अरविन्द ने अपनी सम्मति इस प्रकार दी है -

"मैं इस विषय में अपनी कोई निश्चित सम्मति प्रस्तुत न कर सकूंगा। परन्तु इतना कहना आवश्यक है कि प्राचीन संसार के विषय में आधुनिक ज्ञान की प्रगति दयानन्द के विचार को उत्तरोत्तर पुष्ट कर रही है। पुरातन सभ्यताओं में अवश्य अनेक वैज्ञानिक रहस्य थे जिनमें से अनेक को आधुनिक विद्या ने पुनः पाया है तथा विस्तृत, अधिक सम्पन्न एवं सम्यक् रूप से व्यक्त किया है परन्तु अन्य रहस्य अब भी उसने नहीं पाए हैं।" और इस प्रकार वेदों में वैज्ञानिक सत्य तो निहित है ही, यह कोई स्वामी दयानन्द की कल्पना मात्र नहीं है। किन्तु श्री अरविन्द एक और महत्त्वपूर्ण वात्त कहते हैं - "मेरा विश्वास तो यह है कि वेदों में एक दिव्य विज्ञान के अन्य सत्य भी हैं जो वर्तमान संसार के पास बिलकुल नहीं हैं। और तब तो दयानन्द ने वैदिक विद्या की गंभीरता एवं विस्तार के विषय में अधिक नहीं अपितु कुछ कम ही वर्णन किया है।"

श्री अरविन्द का विश्वास है कि वेद की अंतिम पूर्ण व्याख्या कोई भी हो, स्वामी दयानन्द को "वेद के सत्य सूत्रों के प्रथम आविष्कर्ता के रूप में सदा आदर मिलेगा।" स्वामी दयानन्द की प्रत्यक्षदर्शी दृष्टि ने युगों के अंधकार को चीरकर सत्य का प्रत्यक्ष प्रकाश प्राप्त करने का महान कार्य किया था और इस प्रकार "उन्होंने उन द्वारों की कुंजी प्राप्त कर ली जिन्हें काल ने बन्द कर रखा था और रुके पड़े निर्झरों के मुख पर से उन्हें बन्द करने वाली सील मोहर तोड़ फेंकी।"

[स्रोत : श्री अरविन्द-साहित्य-दर्शन, बंकिम-तिलक-दयानन्द - 19वां प्रकरण, पृष्ठ 137-140, श्री अरविन्द प्रकाशन दिल्ली, 1974, प्रस्तुतकर्ता : भावेश मेरजा]

...